U.G. Part-III (Hons.)
Paper-VI

DEINDUSTRIALISATION AND ITS IMPACT

Page No.:
Date:

Q. वि-औद्योगीकरण के कारणों का उल्लेख करते हुए उसके परिणामों की समीक्षा करें।

'वि-औद्योगीकरण' एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें राष्ट्रीय आय में उद्योग क्षेत्र की हिस्सेदारी तथा इसमें कार्यशील जनसंख्या में कमी आती है। औपनिवेशिक भारत में यह प्रक्रिया स्पष्टतः विदेशी सत्ता के "राजनीतिक दबाव एवं प्रशासनिक कसाव" का नतीजा था जिसने भारतीय हस्तशिल्प उद्योगों एवं इनसे जुड़े लोगों की कमर तोड़ दी। सदियों से भारत जो कि अपने परम्परागत उद्योग-धंधों के कारण विदेशियों के बीच प्रशंसा एवं ईर्ष्या का विषय रहा था, अंग्रेजों की गलत नीतियों की वजह से अन्ततः कच्चे मालों का निर्यातक तथा ब्रिटिश निर्मित वस्तुओं का उपभोक्ता मात्र रह गया।

ब्रिटिश अधिकारियों एवं उनके समर्थकों ने वि-औद्योगीकरण को "पूंजीवादी रूपांतरण की कीमत" के रूप में देखा है। उनका कहना है कि हस्तशिल्प उद्योग प्राक्-पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली से जुड़ा होता है एवं पूंजीवादी परिवर्तन के क्रम में इसका टूटना आवश्यंभावी होता है जैसा कि इंग्लैंड एवं अन्य यूरोपीय देशों में हुआ। इनकी बात यदि सही भी माने तो इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति के पश्चात् हस्तशिल्प उद्योग के पतन से उत्पन्न संकट की बड़ी सीमा तक कारखानों वाले उद्योग से उत्पन्न रोजगार एवं आय के साधनों से हो गयी थी। भारतीय कारीगरों को ऐसी औद्योगिक प्रगति की कीमत चुकानी पड़ रही थी जो भारत से छः हजार मील की दूरी पर हो रही थी क्योंकि 1850 एवं 1860 के दशक तक भारत में कारखानों का अस्तित्व था ही नहीं और उसके बाद भी विकास की प्रगति दुःखद रूप से धीमी रही। दादाभाई नौरोजी, आर. सी. दत्त, रानाडे, मदनमोहन मालवीय आदि राष्ट्रवादी आर्थिक मीमांसाकारों ने अंग्रेजों के इस स्वार्थपूर्ण चाल की कलई खोल दी।

1600ई. से लेकर 1757ई. तक ईस्ट इंडिया कम्पनी की व्यापार-प्रणाली एवं नीतियां भारतीय हस्तशिल्प उद्योग के लिए बहुत ही अनुकूल थी, किंतु बंगाल में अंग्रेजी शासन की स्थापना के साथ ही, इसमें अभूतपूर्व बदलाव आया जिससे भारतीय हस्तशिल्प उद्योग को भारी क्षति पहुंची। कम्पनी राजनीति प्रभाव के बूते पर बंगाल के बुनकरों को मजबूर किया कि वे

Scanned with CamScanner

अपना माल कम दाम पर बेचे। यहाँ तक कि कई बार उन्हें क्रय-मूल्य से भी कम दाम पर बेचने हेतु मजबूर किया गया। बुनकरों पर कम्पनी के कारखानों में काम करने हेतु दबाव भी डाला जाता। जुलाहों पर दबाव को प्रभावपूर्ण बनाने हेतु कम्पनी ने 'दादनी प्रथा' चलाई। इसके अन्तर्गत जुलाहों को निश्चित तिथि पर निश्चित परिमाण में और निश्चित मूल्य पर कपड़ा देना होता था। कम्पनी द्वारा तय की गई दरें बाजारों में प्रचलित भाव से काफी कम होता था जिससे बुनकरों को घाटा सहना पड़ता। इसके अतिरिक्त कम्पनी के नौकरों ने कच्चे सूत की बिक्री पर एकाधिकार कायम कर लिया। उन्होंने पुनः इसे बहुत ही उच्चे मूल्यों पर हस्तशिल्पियों को बेचते तथा इनके द्वारा निर्मित मालों को कम कीमत पर खरीदते। इस प्रकार भारतीय हस्तशिल्पकार खरीदने एवं बेचने दोनों मामलों में मजबूर थे।

अँग्रेजी शासन की स्थापना ने देशी राजे-रजवाड़े के अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया था। ये रजवाड़े भारतीय हस्तशिल्प उद्योग के सबसे बड़े खरीददार एवं संरक्षक थे। अब उनकी स्थिति ब्रिटिश सर्वोच्चता में आकर ऐसी नहीं रह सकी कि वे इन उद्योगों को प्रश्रय देते।

हस्तशिल्प उद्योगों के विनाश में अंग्रेजों की विभेदकारी नीतियाँ सर्वाधिक घातक सिद्ध हुई। अंग्रेजों ने भारतीय निर्यात को हतोत्साहित करने के उद्देश्य से इंग्लैंड में आयात की जानेवाली भारतीय वस्तुओं पर भारी आयात शुल्क लगाये। शुल्क की यह ऊँची दर तब तक लागू रही जब तक उनका भारत से निर्यात पूरी तरह समाप्त नहीं हो गया। औद्योगिक क्रांति से उत्पन्न नवोदित शक्तिशाली औद्योगिक वर्ग ने अंग्रेजी शासन पर भारतीय व्यापार में अपनी साझेदारी को लेकर दबाव बनाना शुरू किया जिसकी चरम परिणति 1813 के चार्टर ऐक्ट में सामने आयी। इस ऐक्ट ने कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार को समाप्त कर दिया। इस समय से भारत में आर्थिक शोषण का एक नया युग प्रारम्भ हुआ। मुक्त व्यापार प्रणाली की नीति के कारण हस्तशिल्प उद्योगों का कारखाना उत्पादों (ब्रिटेन) से प्रतियोगिता में टिक पाना असंभव था। सूती कपड़ों के घर में मानो सूती कपड़े की भरमार कर दी गई। भारतीय हस्तशिल्प उद्योग का आंतरिक बाजार भी नष्ट हो गया। इस विऔद्योगीकरण की प्रक्रिया

Scanned with CamScanner

को आगे बढ़ाने में अंग्रेजी शिक्षा सम्पन्न बाबू को एवं काले साहबों का भी योगदान कम न था, जिन्हें आधुनिकतावश ब्रिटिश वस्तुएँ रूचती थी।

भारतीय उद्योग-धंधों विशेषकर ग्रामीण दस्तकारी उद्योगों की बर्बादी में रेलवे की भूमिका कम न थी। इसके द्वारा ब्रिटिश विनिर्मित वस्तुओं को देश के सुदूर गाँवों में पहुँचाने और परम्परागत उद्योगों की जड़ खोदने में सहायता मिली। अमेरिकी लेखक 'डी. एच. बुकानन" ने लिखा है - "अलग-थलग रहनेवाली स्वावलम्बी गाँव के कवच को इस्पात की रेल ने बेध दिया तथा उसकी प्राणशक्ति को क्षीण कर दिया।"

'विऔद्योगीकरण' के सन्दर्भ में एक उल्लेखनीय बात यह है कि यह सर्वप्रथम उन शहरों की तबाही के रूप में सामने आई जो अपनी विनिर्मित वस्तुओं के लिए मशहूर थे। ढाका, सूरत मुर्शिदाबाद और कई घनी आबादीवाले समृद्ध औद्योगिक केन्द्र जनशून्य हो गये। गाँवों की अपेक्षा शहरी विलास की वस्तुओं की माँग तेजी से गिरी। दूर-दराज के क्षेत्रों पर प्रहार तभी हुआ जब रेलमार्गों के प्रसार के कारण ये क्षेत्र सुगम हो गये। कुछ परम्पराओं के कारण भी हस्तशिल्प उद्योग 20वीं सदी तक बचा रहा जैसे - जजमानी प्रथा। इसके अनुसार कारीगर अपने उत्पादन का एक निश्चित भाग गाँव में किसान परिवार को देकर बदले में फसल का कुछ हिस्सा लेते थे।

'विऔद्योगीकरण' को प्रभाव को लेकर ब्रिटिश राज के आलोचकों एवं उसके प्रवक्ताओं को लेकर बहस होती रही है। कार्ल-मार्क्स से लेकर रमेशचंद दत्त तक ने भारतीय हस्तशिल्प उद्योगों के नष्ट होने एवं उससे पड़नेवाले प्रभावों की चर्चा की है वहीं ब्रिटिश समर्थक इसे नकारते हैं। 'मॉरिस-डी-मॉरिस' ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि विऔद्योगीकरण की बात ही मिथक है। विऔद्योगीकरण के सिद्धांत का खंडन करने के लिए मॉरिस जिन तर्कों का सहारा लेते हैं वह राष्ट्रवादियों के तर्कों से कहीं अधिक अनुमानात्मक एवं संदिग्ध है। मॉरिस का कहना है कि लंकाशायर (ब्रिटेन) से आयात के बावजूद देशी कपड़ा उद्योग ज्यों का त्यों बना रह सकता था यहाँ तक कि इसमें वृद्धि हो सकती थी क्योंकि भारत में कपड़े की माँग इतनी बढ़ गई थी कि देशी एवं विदेशी दोनों

Scanned with CamScanner

प्रकार के कपड़ों की खपत हो सकती थी। किंतु माँग वृद्धि के प्रमाण रूप में आँकड़े उनके द्वारा प्रस्तुत नहीं किये गये। यह कहना कि आयातित धागों की कम कीमत से देशी बुनकरों को लाभ हुआ वास्तव में दो बातों की अनदेखी करना है - एक तो यह कि यहाँ के सूत कातनेवालों का धंधा ठप हो गया और दूसरे बुने हुए वस्त्र की कीमत में गिरावट के कारण बुनकरों को हानि हुई क्योंकि प्रौद्योगिक विकास से भारत में इंग्लैंड की भाँति उत्पादन लागत में कमी नहीं आई थी। हाल ही में 'अमिय बागची' जिन्होंने Deindustrialisation in Gangetic Bihar (1809-1901) पर काम किया है ने अपने शोध में यह बतलाया है कि इस काल में उद्योगों पर आश्रित जनसंख्या 18% से घटकर 8% रह गयी थी तथा सूत कातने एवं बुननेवाले बुनकरों की संख्या में भारी कमी आई थी।

परम्परागत उद्योगों के पतन के साथ ब्रिटेन एवं पश्चिमी यूरोप की तरह आधुनिक मशीन उद्योगों का भारत में विकास नहीं हुआ फलस्वरूप तबाह हस्तशिल्प एवं दस्तकार को वैकल्पिक रोजगार पाने में असफल रहे। ऐसे में उन्हें कृषि एकमात्र संभावित विकल्प दिखा। उपलब्ध आँकड़े यह बताते हैं कि 1901-1941 के बीच कृषि पर निर्भर जनसंख्या का प्रतिशत 63.7 प्रतिशत से 70 प्रतिशत हो गया। कृषि पर बढ़ता दबाव ब्रिटिश शासन के दौरान भारत की घोर गरीबी के मुख्य कारणों में से एक था।

उद्योगों के विकास के लिए कृषि का समर्थन आवश्यक होता है किंतु पिछड़ी हुई कृषि में लोगों की क्रयशक्ति और भी कम हो गयी। इससे आगामी उद्योग-धंधों के विकास में इनका घातक प्रभाव पड़ा।

ग्रामीण शिल्पों के विनाश ने ग्रामीण क्षेत्र में कृषि तथा घरेलू उद्योगों की एकता को तोड़ दिया और इस प्रकार स्वावलम्बी ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विनाश में योगदान दिया। अधिकाधिक लोग बेरोजगार हो गये। राष्ट्रवादियों ने अन्ततः विऔद्योगीकरण को अपने लेखों और भाषणों में भरपूर जगह दिया और भारत के आर्थिक एकीकरण में मदद पहुँचाई।

—X—

Scanned with CamScanner